लोक-सभा वाद-विवाद

[भाग २—प्रश्नोत्तर के अतिरिक्त कार्यवाही]

लोक सभा

शनिवार, १७ सितम्बर, १९५५

लोक-सभा ग्यारह बजे समवेत हुई

[अध्यक्ष महोदय पीठासीन हुए]

प्रश्नोत्तर

(प्रश्न नहीं पूछे गये—भाग १ प्रकाशित नहीं हुआ)

अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के बारे में प्रस्ताव

प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक कार्य मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरू) : मैं प्रस्ताव करता हूं :

> "कि वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और उसके बारे में भारत सरकार की नीति पर विचार किया जाये ।"

लगभग छः मास पहिले मैं ने इस सभा में वैदेशिक मामलों पर भाषण दिया था । मेरा ख्याल है कि वह अनुदानों की मांगों के बारे में था । उस समय मैंने अन्तर्राष्ट्रीय मामलों की ओर ध्यान दिलाया था और कहा था कि भविष्य बहुत ही अन्धकारमय है । स्थिति बिगड़ गई थी और विश्व व्यापी युद्ध के विपत्ति का यह युद्ध कराने वाले किसी कारण के बनने का बड़ा खतरा था । और साधारणतया एक भय का वातावरण था । चारों ओर बन्दूकें भरी हुई थीं और लोग उनके चलाने को तैयार खड़े थे । यह कहने में मुझे खुशी है कि अब स्थिति में इन पिछले छः मासों में बहुत सुधार हो गया है । बन्दूकें अब भी भरी हैं परन्तु उंगलियां घोड़ों पर नहीं हैं । मैं आज के संसार का बहुत आशामय चित्र खींचना नहीं चाहता, क्योंकि इसमें अनेकों अन्धकारमय और खतरें की बातें हैं । तो भी, मैं समझता हूं कि यह कहना ठीक है कि चारों ओर वातावरण में सुधार हुआ है और पहिली बार संसार के लोगों में शान्ति की भावना, यह भावना उत्पन्न हुई है कि युद्ध अनिवार्य नहीं है या नहीं होगा बल्कि वास्तव में इससे बचा जा सकता है । मैं समझता हूं कि संसार में लोगों के मस्तिष्क में जो सब से बड़ी बात अब उठी है वह यह है यदि मैं यह कह सकूं—कि युद्ध करना निरर्थक है, तथा कि युद्ध से—कम से कम आधुनिक प्रकार के युद्ध से किसी बड़ी समस्या का हल नहीं होता और इसलिये सारी समस्याओं पर चाहे कितनी ही कठिन और जटिल हों, शान्तिपूर्वक विचार किया जाना चाहिये । उन्हें बातचीत द्वारा हल करने की कोशिश करनी चाहिये । यह कहना मामूली सी बात महसूस हो सकती है और इतने पर भी मैं समझता हूं कि यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात है कि अधिक से

[श्री जवाहर लाल नेहरू]

अधिक लोगों ने ऐसा ही सोचा तथा कहा है। में भारत के लोगों की बात नहीं कर रहा हूं क्योंकि हमने सदैव ही ऐसी ही बात कही है। परन्तु, कई बड़े और शक्तिशाली देश, जो अपने सैन्य बल पर अधिक विश्वास करते हैं, आज कुछ और बात कहते हैं । मेरा ख्याल है कि यह बहुत महत्वपूर्ण बात है क्योंकि हो सकता है कि इससे संसार में एक बिल्कुल नया दृष्टिकोण व्यापक हो जाये। में फिर एक बार यह कहना चातहा हूं कि में अत्यधिक आशावादी बनना नहीं चाहता क्योंकि चारो ओर खतरे के स्थान अभी हैं और अब भी अनेकों ऐसे लोग है जिनका विश्वास—शायद उन्होंने ऐसा कहा है—वर्तमान समस्याओं की युद्ध जैसे तरीक़ों से हल करने में है। परन्तु सारे देशों में लोगों की निरन्तर बढ़ती हुई संख्या शान्तिपूर्ण ढंगों की ओर देखती है और उसने उन लोगों से मुख मोड़ लिया है जो युद्ध की बात सोचते और करते हैं।

छः मास पूर्व जब में ने इस सभा में भाषण दिया था उसके बाद शीघ्र ही बांडुंग सम्मेलन हुआ। प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि यह केवल एशिया के इतिहास में ही नहीं बल्कि संसार के मामलों में बहुत महत्वपूर्ण घटना थी। मेरा ख्याल है कि इसके फलस्वरूप अनेकों बातें हुई हैं। बांडुंग सम्मेलन में एकत्रित हुये ३० राष्ट्रों ने शान्तिपूर्ण ढंगों के पक्ष में अभिलेख बनाया जिस पर सब के हस्ताक्षर तथा स्वीकृति थी। यह अभिलेख, निश्चय ही, उपनिवेशवाद और जातिवाद के विरुद्ध था। यह विचार करते हुये कि बांडुंग में जिन राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया उनकी दृष्टि और नीतियों में महान अन्तर था, में समझता हूं कि वह एक बहुत उल्लेखनीय सफलता की बात थी। फिर भी बुनियादी बातों के बारे में वे एक सामान्य आधार पर आ सके। मतभेद होते हुये भी, यह शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व का सामान्य आधार खोजने के लिये लोगों के प्रयास का एक महत्वपूर्ण उदारहण है।

उसके बाद, बहुत सी बातें हुईं। परन्तु लगभग उस समय उससे कुछ पहिले और कुछ बाद में, आस्ट्रिया शान्ति सन्धि हुई जिससे उन अनेकों समस्याओं में से एक विपत्तिजनक सवाल दूर हो गया है जिनका सामना योरोप का साधारणतया रहता है। रूस और यूगोस्वालिया ने एक दीर्घकालीन झगड़े को समाप्त कर दिया। निःशस्त्रीकरण के सवाल के बारे में एक नया दृष्टिकोण अपनाया गया। उस समय रूस ने चांसलर एडेनौर को आमंत्रण भेजा, जो अब कार्यान्वित हो चुका है, और अन्य अनेकों बातें हुईं। इन सब से भी बात बड़ी यह हुई कि जेनेवा में चार बड़े देशों का सम्मेलन हुआ। सम्मेलन ने कोई संकल्प आदि स्वीकार नहीं किया। कोई निश्चित कार्य किये बिना भी इसने संसार के सारे मामलों में एक महान अन्तर पैदा कर दिया है। इसमें सन्देह नहीं कि वहां उपस्थित चारों विख्यात प्रतिनिधियों को इसका श्रेय प्राप्त है, फिर भी मैं इस बारे में अमरीका के प्रेजिडेण्ट और रूस के प्रधान मंत्री का विशेषरूप से उल्लेख करना चाहता हूं। इन देशों के बीच जो भारी मतभेद था उसमें कुछ कमी होने पर संसार में कुछ आश्चर्य और सन्तोष का प्रदर्शन किया गया।

उसके बाद हाल ही में, दो या तीन घटनायें हुई हैं,। एक तो अणुशक्ति का शान्तिपूर्ण कार्यों में प्रयोग के विषय पर जेनेवा में सम्मेलन हुआ। उसने संसार के विचारों को इन शान्तिपूर्ण प्रयोगों की ओर

मोड़ दिया है क्योंकि जन साधारण ने अणु-शक्ति को केवल एक विध्वंसक और विपत्ति की वस्तु ही समझ रखा था। अब, यह मालूम होता है कि यह मानव की उन्नति के लिये भी प्रयोग में लाई जा सकती है और इस प्रकार संसार के सामने यह सवाल और भी स्पष्ट रूप से निर्णय के लिये उपस्थित हो गया है कि वे युद्ध और असीम विनाश की ओर जायेगा या शान्ति, और—यदि असीम नहीं तो मानव की महान—उन्नति का मार्ग अपनायेगा।

पिछले दिनों चांसलर एडेनौर मास्को गये थे और परिणामस्वरूप एक प्रकार का समझौता हुआ। समझौते से बड़ी बातें तय नहीं हुई हैं। हमें यह आशा भी नहीं करनी चाहिये कि सारी समस्यायें एकदम हल हो जायेंगी। जर्मनी की समस्या के हल में अभी बहुत विलम्ब है। मैं यह कहना नहीं चाहता कि इस का सारे सम्बन्धित पक्षों के लिये सन्तोषजनक हल कब होगा। परन्तु स्मरणीय बात यह है कि वह समस्या सम्भाव्य झगड़े की परिस्थितियों से निकल कर विचार विमर्श किये जाने की स्थिति में आ गई है। स्वयं यही एक बहुत बड़ा लाभ है। अतः, रूस और चांसलर एडेनौर के बीच यह समझौता अधिक अच्छा न होने पर भी, तनाव को कम करने और समस्याओं को शान्तिपूर्ण हल की दिशा में एक लाभप्रद पग है।

फिर, पिछले कुछ सप्ताहों से जेनेवा में अमरीका और जनवादी चीन सरकार में राजदूत अपेक्षतः एक साधारण मामले पर अर्थात्, अपने अपने नागरिकों को स्वदेश लौटने की अनुमति दिये जाने के विषय पर विचार विमर्श कर रहे हैं। कुछ दिनों पूर्व यह घोषित किया गया था कि इस मामले में एक समझौता हो गया है। मैं कह चुका हूं कि इससे समस्या का बहुत सीमा तक हल नहीं हुआ है। अमरीका और चीन को प्रभावित करने वाले बड़े प्रश्न शेष हैं। दूर-पूर्वी देशों की समस्या यथापूर्व है। कोरिया के भविष्य का अभी तक फैसला नहीं हो पाया है। फारमोसा या ताईवान, या क्यूनाम तथा मत्सू के छोटे छोटे द्वीप, जिनके बारे में बहुत समय से यह मत रहा है कि द्वीप चाहे अन्य किन्हीं मामलों का फैसला हो जाये, जनवादी चीन में मिलने चाहियें—वह समस्या अभी शेष है। तो भी सभा को यह याद रखना चाहिये कि इन सब बातों के होते हुये भी समुद्री स्थिति में एक प्रकार का परिवर्तन हो गया है। अब हमने काफ़ी समय से चीन सागरों में किसी बड़े झगड़े के बारे में नहीं सुना है। चाहे कोई सरकारी समझौता हुआ है या नहीं—और कोई हुआ भी नहीं है—सच बात यह है कि लोग समस्याओं का फैसला फौजी कार्यवाही से करने के विचार से दूर भागते हैं, और शान्तिपूर्ण फैसले की अधिक उम्मीदें रखते हैं।

ये सारे परिवर्तन हुये हैं, जो यह बताते हैं—लोगों में युद्ध या, यदि आप चाहें तो, युद्ध के भय के प्रति घृणा, और समस्याओं को शान्तिपूर्वक हल करने की इच्छा का पैदा होना। मेरा ख्याल है कि यह सच है कि लोगों के विचारों में इस परिवर्तन का कारण कम से कम कुछ तो यह है कि वे नये नारिकीय अस्त्रों अणु बम और उद्‌जन बम और उसके उत्पादों की आश्चर्यजनक विनाशक शक्ति को महसूस करते हैं। यह एक बड़ी बात है। तो भी, मेरा ख्याल है, यह केवल वही बात नहीं है, अपितु, यदि मैं सम्मान पूर्वक कह सकूं तो, बुद्धि और सद्‌भावना की ओर लोगों का वापस आना, युद्ध और शीत युद्ध के लम्बे वर्गों की प्रतिक्रिया है और लोगों का उनसे परेशान होना है। क्योंकि वे महसूस करते हैं कि उन्हें उनसे कुछ प्राप्त

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

नहीं हुआ है। इससे कोई समस्या हल नहीं हुई है, इसने केवल उन्हें महान परिश्रम, उत्तेजना, क्रोध, और घृणा को ही स्थिति में रखा है। अतः इस स्थिति से उनका इस दिशा में मुड़ना है कि "अच्छा, हमें इन समस्याओं को किसी और ढंग से हल करने का प्रयत्न करना चाहिये, चाहे उनमें कुछ समय लगे।"

इस सारी परिस्थिति में भारत का क्या स्थान है ? यह कहना अत्युक्ति होगा कि भारत ने विश्व की नीति में कोई बड़ा परिवर्तन किया है। हमें अपने कार्य का वर्णन बहुत बढ़ा चढ़ा कर नहीं करना चाहिये। परन्तु यह सच है कि महत्वपूर्ण अवसरों पर भारत के प्रयत्नों से कुछ परिवर्तन हुये हैं और उन परिवर्तनों के कुछ परिणाम भी निकले हैं।

पिछले कई सालों में ,भारत से कोरिया, हिन्द चीन और अन्य स्थानों पर अन्तर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्व उठाने को कहा गया है। और अब, जैसा कि सभा को विदित है, यह प्रस्ताव है कि भारत को अमरीका में चीन के नागरिकों के सम्बन्ध में कुछ उत्तरदायित्व लेना चाहिये। मेरा ख्याल है कि अनुचित अत्युक्ति के बिना यह कहा जा सकता है कि भारत ने कठिनाई के समय में महत्वपूर्ण कार्य किया है। प्रायः यह पर्याप्त रूप से सार्वजनकि कार्यवाही न थी—और न ही हम इसे सार्वजनकि कार्यवाही या प्रोपैगैन्डा का विषय बनाना चाहते थे। और न अब ऐसा चाहते हैं। यह सम्बद्ध पक्षों तक मित्रतापूर्ण पहुंच की साधारण कार्यवाही थी। इससे कभी कभी दूसरों को एक दूसरे के समीप लाने में सहायता मिली है। हमें कभी भी मध्यस्थ बनने की इच्छा हुई है और न ही कभी हमने मध्यस्थ के रूप में कार्य किया है। हमें इस बारे में बिल्कुल स्पष्ट होना चाहिये और न ही इस रूप में कार्य करने की हमारी कोई इच्छा है। प्रायः 'मध्यस्थ' शब्द के भिन्न भिन्न अर्थ लिये जाते हैं। अतः मैं इसे पूर्णतया स्पष्ट कर देना चाहता हूं। बड़े देशों के बीच मध्यस्थता का कोई प्रश्न नहीं है। हमने जिस बात का सुझाव दिया है और जिसे प्राप्त करने का प्रयत्न किया है वह यह है कि वे देश एक दूसरे के आमने सामने आयें। आपस में बात करें और अपनी समस्याओं को स्वयं हल करें। यह हमारा या दूसरों का काम नहीं है कि बीच में पड़ें और उन्हें यह सलाह दें कि वे क्या करें। परन्तु कभी हम उन बाधाओं को दूर कर सकते हैं जो पिछले कुछ वर्षों में पैदा हुई हैं।

इस नई परिस्थिति में भारत का योग 'पंच शील' के दो शब्दों में या यूं कहिये कि इसमें निहित विचारों में बयान किया जा सकता है। सभा इस बात पर ध्यान देगी कि जब से इस शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के विचारों का —इन विचारों में कोई नई बात नहीं है, परन्तु फिर भी यह एक प्राचीन विचार का एक नये प्रसंग में प्रयोग है— उल्लेख और प्रयोग पहली बार किया गया था, वे केवल संसार में फैले ही नहीं हैं, उन्होंने अधिक से अधिक देशों को प्रभावित ही नहीं किया है, बल्कि उनमें उत्तरोत्तर गूढ़ता बढ़ती गई है। उनके अर्थ भी अधिक से अधिक गूढ़ होते गये हैं। संसार के मामलों में इसे विशिष्ट अर्थ और महत्व दिया जाने लगा है।

मैं समझता हूं कि हम शान्तिपूर्वक निबटारे के विचार को फैलाने में योग देने के लिये कुछ श्रेय ले सकते हैं। हम इसके लिये भी कुछ श्रेय ले सकते हैं कि हमने हस्तक्षेप न करने और प्रत्येक देश के, दूसरों के मामलों में हस्तक्षेप किये बिना, अपना

भाग्य स्वयं गढ़ने के अधिकार को मान्यता देने के विचार को फैलाने में भी योग दिया है । यह एक महत्वपूर्ण विचार है । फिर, इस में कोई नई बात नहीं है । कोई भी महान सत्य नये विचार नहीं हो सकते । परन्तु सच यह है कि उन पर ज़ोर देने की आवश्यकता थी । इसका कारण यह है कि पिछले समय में बड़े देशों की दूसरों के मामलों में हस्तक्षेप करने, उन पर दबाव डालने और यह चाहने की प्रवृत्ति रही है कि दूसरे देश उनका साथ दें । मैं समझता हूं यह बड़प्पन और छोटेपन का स्वाभाविक परिणाम है । यह हाल में ही पैदा नहीं हुआ है बल्कि इतिहास इससे भरपूर है ।

किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप न करने पर, वह हस्तक्षेप चाहे राजनीति में हो, चाहे आर्थिक व्यवस्था में और चाहे विचारों आदि में, ज़ोर देना वर्तमान स्थिति पर विचार करने में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है । इस बात का बहुत कम महत्व है कि अत्र तत्र इस सिद्धान्त का पूर्णरूपेण पालन न किया जाय । आप एक विधि बनाते हैं, और लोगों का यह कहना ठीक नहीं है कि किसी ने उन से उस विधि का पालन और अपराध को कराया । विधि वह है जो धीरे धीरे देश की सारी जनता के जीवन को प्रभावित करती है, हालांकि कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो उसका पालन नहीं करते हैं । मैं यह कहने की ज़रूरत नहीं समझता कि जो लोग इसमें विश्वास नहीं करते हैं धीरे धीरे करने लगेंगे ।

अतः महत्व इस बुनियादी विचार का है । और फिर, इस विचार का मतलब क्या है इसका मतलब है कि उन्नति के तरीके अलग अलग हो सकते हैं और सम्भव है कि जो उद्देश्य प्राप्त करने हैं उनके सम्बन्ध में अलग अलग दृष्टिकोण हों । परन्तु यह भी सम्भव है कि साधारणतया वे एक ही हों । अगर मैं दूसरे शब्दों में कहूं तो, सच किसी एक देश तक या किसी विशेष देश की जनता तक सीमित नहीं है । किसी भी व्यक्ति को ऐसा सोचने के बहुत से पहलू निकलते हैं कि वह इसके बारे में सब बातों को जानता है । प्रत्येक देश और प्रत्येक व्यक्ति को, यदि वे अपने प्रति सच्चे हैं तो, अपना रास्ता जांच और ग़लती तथा दुःख और अनुभव का सामना करते हुये स्वयं ढूंढना पड़ता है । केवल तब ही वे आगे बढ़ सकते हैं । यदि वे केवल दूसरों की नक़ल करते हैं या नक़ल करने की कोशिश करते हैं, तो सम्भवतः परिणाम यह होगा कि वे लोग आगे न बढ़ सकें । चाहे नक़ल बहुत अच्छी हो हो, फिर भी यह उन पर लादी हुई एक वस्तु है, या ऐसी वस्तु है जो उन्होंने मस्तिष्क को उस साधारण उन्नति के बिना पाई है जो उसे उनके शरीर का एक सक्रिय अंग बनाती है ।

हमने पिछले लगभग तीस सालों में एक महान नेता, महात्मा गांधी, के अधीन इस देश का विकास किया है । इस बात को एक ओर रखते हुए कि उन्होंने क्या किया या क्या न किया यह देश का एक जीवो-विकास था । यह एक ऐसी बात थी जो भारतीय भावना और विचार-धारा के अनुकूल थी । परन्तु इतने पर भी यह आधुनिक संसार से अलग न थी । यह ऐसी बात थी जो आधुनिक संसार के अनुकूल थी या जिसने अनुकूल बनने की कोशिश की । इस में सन्देह नहीं कि अनुकूलता का यह क्रम चलता रहेगा । परन्तु यह कुछ ऐसी चीज़ है जो भारतीय विचार-धारा और भावना से पैदा होती है । इस पर बाहर से सीखी हुई अनेकों बातों का प्रभाव है । क्योंकि यदि हम पिछले सैकड़ों सालों की भांति अलग अलग रहते हैं तो हम पिछड़ जायेंगे । यदि हम

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

पर दूसरे लोग छा जाते हैं, तो हमारा अपना कोई आधार नहीं रह जाता । अतः पंचशील का यह विचार, इसके अनकों रूपों के अतिरिक्त, यह अति महत्वपूर्ण सचाई निर्धारित करता है कि अन्त में प्रत्येक राष्ट्र को अपनी रक्षा स्वयं करनी पड़ेगी । मैं फौजी रक्षा के बारे में बात नहीं कर रहा हूं, बल्कि उस दिमागी, नैतिक और भावनात्मक कोशिश और उस प्रयत्न की बात कर रहा हूं जिससे दूसरों के विचारों को ग्रहण करें, और दूसरों के अनुभव से सीखने की शक्ति आती है और उस प्रयत्न का वर्जन कर रहा हूं जो स्वयं किया जाय । उन अन्य देशों को चाहिए कि बिना किसी हस्ताक्षेप या बिना अपने विचार लादने के एक दूसरे के इस कार्य को सहानुभूति और मित्रता की भावना से देखें ।

अतः भारत ने यह थोड़ा सा काम किया है । पिछले कुछ सालों में भारत की जो साधारण नीति बनाई गई है, और जिस पर चलने की हम ने पूरी पूरी कोशिश की है, उसे अन्य देशों में उत्तरोत्तर मान्यता मिली है । यह संभव है कि उसे सारे देशों ने न माना हो, और वास्तव में नहीं माना है । कुछ इसके कुछ भागों को नहीं मानते या सारी नीति को ही नहीं मानते । परन्तु धीरे धीरे, भारत की नीति की निष्पक्षता में विश्वास हो गया है अर्थात्, यह एक शुद्ध भावना की नीति थी जो एक निश्चित विचार-धारा पर आधारित है और इसमें किसी भी देश के लिए बुरी भावना नहीं है । यह अनिवार्य रूप से सद्भावना और देशों के साथ मित्रता की भावना पर बनी थी । मेरा ख्याल है कि इस तथ्य को उत्तरोत्तर मान्यता मिली है ।

सभा जानती है कि थोड़े से समय पहले मैंने कुछ देशों का काफी लम्बा दौरा किया था, विशेषकर रूस और योगोस्लाविया का । इसके अतिरिक्त, मैं जैकोस्लोवाकिया, पोलैंड आस्ट्रेलिया, रोम, इंगलैंड और मिश्र भी गया था । और अचानक जब कि मैं लौट रहा था, मैंने पश्चिमी जर्मनी का एक छोटा भाग, उसेलडार्फ, थोड़े से समय में देखा । जहां कहीं मैं गया, मेरा असाधारण असाधारण हार्दिक या ऐसा स्वागत किया गया जिससे स्वाभावतः मुझ पर बड़ा प्रभाव पड़ा ; परन्तु मैंने महसुस किया, जैसा कि निःसंदेह सभा महसुस करती है कि उस स्वागत का कोई वैयक्तिक महत्व नहीं था । यह भारत की मूल नीति को सराहना कर और शान्ति के पक्ष में प्रदर्शन था । यह असाधारण बात है कि जिस देश में भी मैं गया, उसी देश के लोग शान्ति के इस विचार की ओर कितने झुके हुए थे और वे केवल बुद्धिपूर्वक ही नहीं बल्कि भावनापूर्वक झुके हुए थे । और वे देश, सभा को याद होगा कि एक प्रकार के नहीं हैं । वे विभिन्न प्रकार के देश हैं तथा उनकी पृष्ठभूमि भिन्न भिन्न है तो भी यह एक सामान्य बात थी । अतः मैं ने उस स्वागत को अपने देश और उस नीति का सम्मान माना जिस पर हम चल रहे हैं ।

शीघ्र ही आगामी कुछ महीनों में हमारे यहां दूसरे देशों के अनेकों सुप्रसिद्ध राजनीतिज्ञ और नेता आयेंगे । पिछले दिनों मिस्र के उप-प्रधान मंत्री हमारे यहां आये थे । उनका हमने हार्दिक स्वागत किया । क्योंकि मिस्र से हमारे अत्यधिक मित्रता के सम्बन्ध हैं । दो दिनों में लाओस के युवराज और प्रधान मंत्री दिल्ली आ रहे हैं । और आगामी कुछ महीनों में रूस के प्रधान मंत्री हमारे यहां आयेंगे । मुझे उम्मीद है कि उनके साथ उनके कुछ मुख्य साथी भी आयेंगे । इसके अतिरिक्त आगामी जाड़े में हमारे यहां आने वाले हमारे मुख्य अतिथियों में

एथोपिया के सम्राट, साउदी अरब के सुलतान, ईरान के शाह, इंडोनेशिया के उपराष्ट्रपति, कनाडा, इटली और आस्ट्रेलिया के विदेश मंत्री और जर्मनी के वाइस चांसलर हैं इन सुप्रसिद्ध महानुभावों का, जो विभिन्न विचारो का प्रतिनिधित्व करते हैं, हम समान भाव व व्यक्ति से स्वागत करेंगे। मुझे आशा है कि भारत का हृदय बहुत उदार है और वह इनमें से प्रत्येक महानुभाव के लिए मित्रता की भावना रखता है।

मैं ने अभी एक नई ज़िम्मेदारी के बारे में कुछ कहा था जो शायद हमें उठानी होगी। यह नई ज़िम्मेदारी जनेवा में अमरीका और जनवादी चीन गणराज्य के राजदूतों के बीच हुए समझौते के बारे में है। अभी यह मामला पूरी तरह तय नहीं हुआ है परन्तु मुझे आशा है कि अगले कुछ दिनों में यह तय हो जायेगा। इस मामले में, चीन की जनवादी सरकार ने भारत का नाम अमरीका में उनका प्रतिनिधित्व करने या उनकी ओर से यह काम करने के लिए ठीक उसी प्रकार दिया था और जैसे, मेरा ख्याल है, अमरीका इंगलिस्तान का नाम चीन में उनके नागरिकों की ज़िम्मेदारी लेने के लिए दिया था। भारत के नाम का चीन की सरकार का प्रस्ताव अमरीका ने स्वीकार किया और इस तरह हम से दोनों पक्षों ने यह काम करने के लिए कहा। इन परिस्थितियों में हमें यह मानना पड़ा और हमने चीन की जनवादी सरकार और अमरीका से कह दिया है कि यदि यह ज़िम्मेदारी हमें उठानी ही है तो हम इसे पूरी करने की कोशिश करेंगे। अभी हमें दूसरी विस्तृत बातें निश्चित रूप से ज्ञात नहीं हैं क्योंकि यह मामला अभी तक पूरी तरह तय नहीं हुआ है।

मैं ने विश्व परिस्थिति की अनेकों सुखद घटनाओं का वर्णन किया परन्तु, अनेकों अंधकारमय स्थान भी हैं। अमरीका के उत्तर, मोरक्को और अलजीरियां में हाल में ही कुछ भयानक घटनायें हुई हैं। इसमें मुझे तनिक भी संदेह नहीं है कि भारत में जिसने भी उनके बारे में सुना है उसे उनसे बड़ा स्वभाविक दुःख हुआ है। इसके बारे में मैं अधिक कहना नहीं चाहता, क्योंकि हल कोई ढूंढ निकालने की कोशिश हो रही है और मैं सच्चे दिल से आशा करता हूं कि वे कोशिशें सफल होंगी, परन्तु में यह कहूंगा कि उत्तरी अफरीका के देशों में जो हो रहा है उससे केवल समूचे एशिया और अफरीका के लोगों पर ही गहरा प्रभाव नहीं पड़ा है—में आशा करता हूं कि अन्य देशों में भी पड़ा है। इसका कारण यह है कि यह सिर्फ किसी विधि और संविधान का मामला नहीं है बल्कि यह है कि आज़ादी के लिये लड़ने वाले लाखों व्यक्तियों के साथ क्या होता है। खैर, जो भी दुःखान्त घटना हो गई सो हो गई और अब हम केवल यह आशा कर सकते हैं कि यह इस दुःख का अन्त है, और इन देशों के लिये शीघ्र ही आज़ादी का कोई रास्ता ढूंढ निकाला जायेगा।

अफरीका महाद्वीप के दूसरे किनारे पर दक्षिण अफरीका संघ है जो आज संसार में प्रत्येक उस बात का एक निर्लज्ज समर्थक है जिससे में समझता हूं कि केवल संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा पत्र को ही नहीं बल्कि हर जगह सभ्य मानव जाति को घृणा करनी चाहिये। वे समझते है कि वे आजकल जातिवाद और मालिक जाति के, एक ऐसी बात जिसके लिय संयुक्त राष्ट्र संघ का घणाधो पत्र मना करता है, और उस बात के, जिसके विरुद्ध पिछला विश्व युद्ध लड़ा गया था, प्रबल समर्थक हैं—और इस बारे में कोई छिपाव नहीं है, कोई पर्दा नहीं है। कोई यहां एक सरकार द्वारा एक ऐसी नीति का

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

अनुसरण करने का एक ऐसा असाधारण उदाहरण है जिससे मैं समझता हूं कि संसार में प्रत्येक विचारवान और प्रत्येक सभ्य व्यक्ति को निन्दा करनी चाहिये ।

मध्य अफरीका में बड़ा झगड़ा व आन्दोलन हो रहा है क्योंकि वर्तमान युग की एक विशेष बात अफरीका की यह जागृति है । इस देश में हम सब को उससे अत्यधिक सहानुभूति है । अफरीका का इतिहास किसी भी अन्य देश या अन्य महाद्वीप की अपेक्षा अधिक विपत्ति व दुःख का इतिहास है । यह इतिहास केवल वर्तमान काल का ही नहीं है बल्कि उस समय से सैकड़ों वर्षों का है जब कि ग़लाम व्यापार द्वारा वहां के अनेकों लोग पश्चिमी देशों को ले जाये गये थे । मैं सच्चे दिल से आशा करता हूं कि अफरीका के लोगों को आज़ादी मिलेगी ।

गोल्ड कोस्ट और नाइजीरिया अफरीका में उज्वल स्थानों में से हैं और मैं आशा करता हूं कि शीघ्र ही हम इन देशों का पूर्ण स्वतन्त्र देशों के रूपों में स्वागत करेंगे ।

हिन्द चीन में तीन अन्तर्राष्ट्रीय आयोग काम कर रहे हैं और उन तीनों के सभापति भारतीय हैं । दिन प्रति दिन हमारे सामने नई समस्यायें—कठिन समस्यायें—आई हैं और अब भी उनका हमें निरन्तर सामना है । परन्तु मुझे आयोगों को, और विशेषकर इन आयोगों के सभापतियों को, उनकी उस बुद्धिमत्ता और योग्यता के लिये अवश्य बधाई देनी चाहिये जो उन्होंने इन समस्याओं को हल करने में दिखाई है ।

अब मैं देश के निकट की उन समस्याओं को लेता हूं जो शायद संसार के इन मामलों की अपेक्षा हमारा अधिक ध्यान अपनी ओर खींचे हुये हैं । लेकिन मैं समझता हूं कि यह ठीक है कि हमें अपने देश के मामलों के बारे में भी संसार की स्थिति का ध्यान रख कर उचित दृष्टिकोण अपनाना चाहिये । अन्यथा हम उन पर उचित दृष्टिकोण से विचार नहीं कर सकेंगे और उनके बारे में ठीक निर्णय करने में असमर्थ रहेंगे । अतः यह बात महत्वपूर्ण है कि हम संसार के मामलों को सदेव अपने सामने रखें । प्रायः यह कहा जाता है कि विदेश नीति अन्तर्देशीय नीति का विकसित रूप है, या कभी विदेश नीति अन्तर्देशीय नीति पर थोड़ा सा प्रभाव डालती है । वे दोनों एक दूसरे को प्रभावित करती हैं । उचित नीति वह है जिसमें दोनों परस्पर सम्बद्ध हों और दोनों एक दूसरे की साहयक सिद्ध हों । इसी प्रकार, संसार में हम जिस नीति पर भी चलते हैं उस का साधारणतया अन्तर्देशीय नीति से संगत होना आवश्यक है । मेरा मतलब यह नहीं है कि प्रत्येक बात में इसका संगत होना आवश्यक है, परन्तु कुछ क्षेत्रों में ये परस्पर संगत हो सकती हैं । परन्तु इस मामले में भी उसी उदार दृष्टिकोण की आवश्यकता है । अन्यथा दोनों नीतियां असफल हो जाती हैं । इसी प्रकार कोई भी अन्तर्देशीय नीति जिस पर हम चलते हैं उन उदार नीतियों में अवश्य संगत होनी चाहियें । परन्तु यह अन्तर्देशीय या विदेश नीति का इतना प्रश्न नहीं है जितना कि यह मूल दृष्टिकोण का, जीवन तथा उसकी राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर मूल, दिमाग़ी, मानसिक और नैतिक दृष्टिकोण का प्रश्न हैं ।

आज कल उन समस्याओं में, जिनका प्रभाव विशेष रूप से हम पर भारत में पड़ता हैं, गोआ की समस्या, पाकिस्तान और श्री लंका सम्बन्धी समस्यायें हैं । पाकिस्तान के बारे में मैं इसके सिवाये और अधिक कुछ कहना नहीं चाहता कि समस्यायें चाहे कितने

ही जटिल हों, परन्तु हमने सदैव ही उनका शान्तिपूर्वक हल खोजने की कोशिश की है और आगे भी ऐसी ही कोशिश करेंगे। श्री लंका के बारे में मैं इस सभा में बता चुका हूं कि वहां की स्थिति अच्छी नहीं है। वास्तव में, यह बहुत ही असन्तोषजनक है। परन्तु अब भी हमें आशा है कि हम कोई ऐसा हल निकाल सकेंगे जो भारत, श्री लंका और हम सब से अधिक सम्बद्ध व्यक्तियों के लिये लगभग नौ लाख भारतीय उद्भव के लोगों के लिये सम्मानपूर्ण होगा।

अब मैं गोआ के प्रश्न पर आता हूं। इस सम्बन्ध में एक भावना है और इसे भारत में तथा विदेशों में समाचारपत्रों ने भी प्रकाशित किया है कि गोआ के मामले में हमारी सरकार की नीति में एक उल्लेखनीय या अचानक परिवर्तन आ गया है। कुछ लोगों का विशेषकर कुछ विदेशी पर्यवेक्षकों का, यह ख्याल है कि हमने यह परिवर्तन देशों के मत या उन की प्रतिक्रिया के कारण किया है। स्वभावतः, केवल इस मामले में नहीं अपितु प्रत्येक अन्य मामले में हमें विदेशी प्रक्रियाओं के जानने में अभिरुचि रहती है। हम पूरी तरह से जागरूक रहना चाहते हैं और जानना चाहते हैं कि संसार क्या कर रहा है और क्या सोच रहा है। हम संसार से अलग नहीं हैं। हम अपने आपको घेरे में बन्द करना नहीं चाहते।

परन्तु मैं यह बात स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि हमने जो भी फैसले किये हैं वे हमारे उस नीति पर चलने के बारे में पूर्णतः अन्तर्देशीय फैसले हैं जिन्हें हम ठीक समझते हैं। हमने जो फैसले किये हैं उनके करने में विदेशों में हुई घटनाओं अथवा वहां कही गई बातों का तनिक प्रभाव नहीं पड़ा है।

दूसरी बात मैं इस सभा को यह बताना चाहता हूं कि नीति में कोई विपरीत अन्तर नहीं आया है। हमने निरन्तर एक ही नीति का अनुसरण किया है और विशेषकर पिछले एक वर्ष से कुछ अधिक समय से, जब से कुछ घटनायें होनी आरम्भ हुई हैं। यह ठीक है कि कभी-कभी भिन्न-भिन्न बातों पर ज़ोर दिया गया है। यह सच है कि कभी इस नीति को लागू करने में कुछ ढील बर्ती गई.. (हंसी)। हंसी का सुनना अच्छा लगता है लेकिन अगर इस के कोई मायने न हो तो यह मेरी समझ में नहीं आती।

श्री कामत (होशंगाबाद) : ठीक इसी तरह से जिस तरह इस नीति के कोई मायने नहीं हैं।

श्री जवाहरलाल नेहरू : मैं श्री कामत के समान बेकार शब्दों का प्रयोग करने में असमर्थ हूं। इसके लिये कोई भी व्यक्ति समर्थ नहीं है।

गोआ के बारे में हमारी नीति की बुनियादी बातें क्या हैं? पहिले, शान्तिपूर्ण उपाय हों—इस बारे में हमें स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिये। यह प्रत्यक्ष है कि जब तक हमें अपनी नीतियों और व्यवहार की पूरी बुनियादों को नहीं धोते तब तक यह अनिवार्य है। अतः जो भी आदमी यह सोचता है कि गोआ के बारे में किये जाने वाले उपाय शान्तिपूर्ण न हों बल्कि और प्रकार के हों, उसको आज़ादी है कि वह वैसी राय रखे परन्तु मेरे लिये उसके साथ चर्चा करने की या बहस करने की कोई बात नहीं है। इसका कारण यह है कि हमारा अशान्तिपूर्ण ढंगों में तनिक भी विश्वास नहीं है।

श्रीमती रेणु चक्रवर्ती (बसिरहाट) : पटना के बारे में आप क्या कहते हैं?

श्री जवाहरलाल नेहरू : विपक्ष की माननीय महिला सदस्य कहती हैं : पटना के बारे में मेरा क्या कहना है? मैं उनसे

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

पूर्णतः समहत हूं । मैं समझता हूं कि पटना में बहुत से लोगों ने जिन में विद्यार्थी भी हैं और निश्चय ही पुलिस भी है, शान्तिपूर्ण ढंग से काम नहीं लिया । मेरे विचार से समय आ पहुंचा है कि जब इस देश के लोग और सारे दल यह फैसला करें कि कार्यवाही के अशान्तिपूर्ण और अनुशासनहीन ढंगों को अपनाना न ही वांछनीय है और न हीं यह हमारे देश के हित में है ।

श्रीमती रेणु चक्रवर्ती : पुलिस के बारे में आप क्या कहते हैं ?

श्री जवाहरलाल नेहरू : अगर पुलिस ग़लती पर है, तो पुलिस को सज़ा मिलनी चाहिये । पुलिस की ग़लत कार्यवाहियों का कोई भी समर्थन नहीं करता । पुलिस या किसी व्यक्ति या किसी अधिकारी की ग़लत कार्यवाही का कोई समर्थक नहीं हैं । परन्तु यदि मैं यह कहूं कि हम केवल इसी बात पर नहीं सोचते रहे हैं कि गोआ में क्या हुआ बल्कि हमने इस पर भी सोचा है कि बाद में बम्बई नगर और दूसरी जगहों में क्या हुआ ? वहां अनुसशासन भंग किया गया अशान्तिपूर्ण तरीक़े अपनाये गये । मैं इसके लिये किसी को दोषी नहीं ठहराता, लेकिन ये घटनायें यह बताती हैं कि देश में एक ऐसा वातावरण बन गया है जो सत्याग्रह आदि के किसी शान्तिपूर्ण कार्य के लिये जरूरी शान्तिपूर्ण वातावरण के एक दम प्रतिकूल था । यदि किसी व्यक्ति का ऐसा विचार है कि फौजी कार्यवाही या पुलिस कार्यवाही जरूरी और मुनासिब है, तो ठीक है, ऐसे तरीक़े भी मौजूद है । परन्तु यदि इसके विपरीत किसी व्यक्ति का विचार यह हो कि शान्तिपूर्ण तरीक़ों का अपनाना अत्यावश्यक है तो वह उन्हें अपनाने की कोशिश करता है । परन्तु दोनों को आपस में मिलाना दो नीतियों की बीच में पड़ना और कहीं के भी न रहना है ।

इस सभा में सम्भवतः ऐसे कुछ लोग हैं जिन्हें भारत के लगभग पिछले ३५ वर्षों के इतिहास का अनुभव है । जब भारत में एक महात्मा के नेतृत्व में राष्ट्रीय आन्दोलन चल रहा था, उस समय जब कभी हम शान्तिपूर्ण ढंगों से तनिक डिगे तो आन्दोलन पूर्णतः रोक दिया गया । क्योंकि हमारे नेता ने यह महसूस किया कि हमें अपने सिद्धान्त और नीति पर अडिग रहना चाहिये । उन्होंने यह भी महसूस किया कि अनुशासन भंग करने, जोश या क्रोध में आकर अगर आप चाहें तो उसे उचित क्रोध कह सकते हैं––लोगों के उस नीति से मुख मोड़ लेने से कुछ भी प्राप्त न होगा । यह चाहे जो था, परन्तु कोई भी किसी भी समय छोटा या बड़ा आन्दोलन जारी नहीं रख सकता अगर वह अपनी नीति को स्पष्ट रूप से नहीं समझता है और अगर उस नीति में किसी अन्य नीति को मिलाये बिना उस पर नहीं चलता है ।

इस मामले में 'सत्याग्रह' शब्द का प्रयोग किया गया है । मैं सत्याग्रह का प्रवर्त्तक नहीं हूं और न ही मैं अपने आप को यह कहने का अधिकारी समझता हूं कि यह क्या है । लेकिन, फिर भी हम में से कुछ लोगों ने कम से कम ३५ सालों तक एक ऐसे ढंग से काम किया है । जहां 'सत्याग्रह' हमेशा ही मौजूद था । अतः हमने जांच और ग़लतियां करके इसके बारे में कुछ सीखा है । सत्याग्रह करना सरकार का काम नहीं है । ज्यादा से ज्यादा सरकार यह कर सकती है वह सत्याग्रह के बीच में रुकावट न डाले, सत्याग्रह को बन्द न करे, क्योंकि यह उसकी विधि या साधारण नीति के विरुद्ध नहीं है । यह और लोगों का कार्य है कि वे सत्याग्रह

करें, अगर वह देश की विधि या साधारण नीति के विरुद्ध नहीं है। अतः, हम सरकार के रूप में सत्याग्रह पर बहस नहीं करते। हम किसी और रूप में या कुछ अन्य लोग इस पर विचार कर सकते हैं।

अब मैं सभा को यह स्मरण कराना चाहता हूं कि पिछले सवा साल म, अर्थात् जब सत्याग्रह आदि की बात होनी आरम्भ हुई, नीति क्या थी? इसमें सन्देह नहीं कि हमेशा ही और बार बार शान्तिपूर्ण ढंगों पर ज़ोर दिया गया था। दूसरे, इस बात पर ज़ोर दिया गया था कि लोग सामूहिक रूप से गोआ में न घुसें। तीसरी बात यह है कि यह कार्य विशेष रूप से गोआनियों को करना चाहिये। यह, लगभग एक साल पहिले कहा गया था और बार बार कहा गया था। बाद में धीरे धीरे यह हुआ कि कुछ ग़ैर-गोआन भारतीयों ने वहां जाने वाले दलों में भाग लिया। दल छोटे छोटे थे और उनमें भारतीय कम थे। यह ठीक है यह बात होने देने के लिये हमारें ऊपर उंगली उठाई जा सकती है। इसमें कोई महत्वपूर्ण सिद्धान्त सम्मिलित न था। यह पूछा जा सकता है, "आपने भारतीयों को सत्याग्रह करने का अधिकार क्यों दिया"? मैं यह नहीं कहता कि भारतीयों को सत्याग्रह करने का अधिकार नहीं है। इस वक्त मैं सत्याग्रह की बात नहीं कर रहा हूं। भारतीयों को गोआ की आज़ादी के लिये काम करने का पूरा हक़ है। मैं प्रतिबन्ध क्यों लगाऊं? परन्तु यह बात मेरी नीति के रास्ते में बाधा उपस्थित कर सकती है। और इसलिये मैं इसे रोक सकता हूं, हालांकि विधागी तौर पर, मैं यह हक़ छीनना नहीं चाहता। इसका कारण यह है कि हमारा ख्याल था कि कहे जाने वाले सत्याग्रह में बहुत से भारतीयों की भाग लेने के परिणाम अच्छे न होंगे, इसलिये हमने इसका विरोध किया! अगर एक या दो भारतीय जाते हैं तो वह कोई बहुत महत्वपूर्ण मामला नहीं है, परन्तु इसमें संदेह था इसलिए बाद हमें यह बात पूरी तरह स्पष्ट करनी पड़ी। धीरे धीरे अगस्त के आरम्भ में, या इससे भी पहिले—१८ जुलाई को—भारतीयों की संख्या कुछ बढ़ गई। मैं इस सभा को निःसंकोच होकर बताना चाहता हूं कि अगस्त के आरम्भ में, अर्थात, १५ अगस्त से एक सप्ताह या कुछ दिन पहिले हम कुछ शक में पड़ गये थे, कि हम गोआ के मामले में क्या कार्यवाही करें, क्योंकि हमने देखा कि ऐसी घटनायें हो रही हैं जो हमारी बनाई हुई नीति के अनुकूल नहीं हैं। इस सारे समय में, यहां तक कि जुलाई के अन्त में भी, हमारी नीति यह थी कि लोग बड़ी संख्या में गोआ न जायें और उसमें अधिक भाग गोआनियों का हो न कि भारतीयों का। हालांकि व्यक्तिगत रूप में भारतीयों के गोआ जाने या न जाने में कोई ठोस अन्तर न था। हमें इन घटनाओं के बारे में बड़ी चिन्ता थी। हम जानते थे कि हमारे देश के बहुत से इच्छुक पुरुष और स्त्रियां आत्म-त्याग की भावना से और गोआ की आज़ादी में मदद करने की इच्छा से वहां जा रहे हैं। हमारी और नीतियां चाहे जो हों, चाहे उनकी नीतियां हमारी नीतियों से भिन्न हों, मगर जो लोग वहां गये उनके व्यक्तिगत उद्देश्यों की हम तारीफ न करें, इसकी कोई बात न थी। यही कारण है कि १५ गस्त की सुबह जब मैं 'लाल किले' के चबूतरे से भाषण दे रहा था मैं ने कहा था कि मेरा दिल और दिमाग उन लोगों के ख्यालों से भरा हुआ है जो इस समय गोआ को सीमा पर थे। हमारे लोगों के साथ खतरें का मुक़ाबला करने में जो हुआ और जो हो सकता था उस से मेरा दिमाग भरा हुआ था। मैं चाहे सहमत हूं या न हूं मगर मेरे दिल में एक उद्देश्य के लिये ख़तरें का सामना करने

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

वाले बहादुर लोगों के प्रति अवश्य सहानुभूति है । परन्तु उस समय मुझे इसके नतीजों की अधिक चिन्ता थी । शायद हमें यह उलाहना दिया जा सकता है कि "आप ने १५ अगस्त तक मामलों को इतना आगे क्यों बढ़ने दिया" ? आलोचना का कारण उचित हो सकता है । मैं निःसंकोच भाव से यह कहना चाहता हूं कि मेरे दिमाग में यह बात साफ न थी कि मामले के इतना आगे बढ़ जाने पर उन लोगों से, जो हमारी इच्छा के विरुद्ध बहुत बड़ी संख्या में गोआ में घुसने के लिये इकट्ठे हो गये थे या इकट्ठे हो रहे थे, एक दम ऐसा न करने के लिये कैसे कहा जाये : अतः, गोआ में जो हुआ, १५ अगस्त को हुआ । बाद में, इस स्थिति पर हम सब को बहुत सोचना पड़ा । उससे हम इस नतीजे पर पहुंचे कि हमें गोआ के मामले में अपनी बुनियादी नीतियों पर ज़ोर देना चाहिये । हमने यह भी फैसला किया कि वर्तमान परिस्थितियों में हमें इस नीति के बारे में कोई भी सन्देह नहीं रहने देना चाहिये । मैं कह चुका हूं कि हमारे खिलाफ़ उचित रूप में यह कहा जा सकता है कि हमें कुछ घटनाओं के बारे में शक़ था । इस लिये हो सकता है कि आम लोग भी हमारी नीति को स्पष्टतः न समझ सके हों । हम पर यह आरोप लगाया जा सकता है और मैं समझता हूं कि सम्भवतः इसमें कुछ औचित्य भी है, हालांकि बुनियादी नीतिय पिछले सवा साल से पूर्णतया स्पष्ट हैं । कुछ भी हो हमने यह महसूस किया कि अब यह जनता के लिये या हमारें लिये या गोआ जाने वाले किसी भी व्यक्ति के लिये ठीक नहीं है कि हम अपने दिमाग़ों में ज़रा सा भी शक़ रखें । इसलिये हमने तय किया कि सत्यागृह यहां तक कि व्यक्तिगत सत्याग्रह भी न करने दिया जाये । वास्तव में यह स्पष्ट है कि १५ अगस्त को इतने बड़े पैमाने पर की गई कोशिश के तुरन्त बाद कुछ व्यक्तियों की कोशिशों पर वापस आने के कोई मायने नहीं हैं । मैं ऐसा किसी सिद्धान्त के आधार पर नहीं, बल्कि नितान्त व्यवहारिकता के आधार पर कह रहा हूं । इससे आन्दोलन का नैतिक और भौतिक महत्व जाता रहता है । माननीय सदस्यों ने समाचारपत्रों में पढ़ा होगा कि पुर्तगालियों ने कुछ लोगों को कैसे हिंसा पर तुले 'सत्याग्रही' कहना आरम्भ कर दिया है । मैं उनके बारें में कुछ नहीं जानता । मेरा ख्याल है कि कुछ ऐसे छोटे छोटे दल हैं, या स्वयं गोआ में कुछ ऐसे छोटे छोटे दल हैं, जिन्होंने एक छोटे से पुल के तोड़ने या कुछ ऐसी ही तोड़फोड़ के काम किये हैं ।

श्री के० के० बसु (डायमंड हार्बर) : क्या पुर्तगालियों द्वारा सत्याग्रहियों के बारे में कही गई बातों की जांच करने का कोई स्वतन्त्र साधन है ?

श्री जवाहरलाल नेहरु : मैं ने अभी कहा था कि समाचारपत्रों में समाचार छपे हैं । उन समाचारों के सच होने में मुझे कोई सन्देह नहीं है कि पुर्तगाली कहते हैं कि हिंसा पर तुले हुये सत्याग्राहियों ने यह किया है वह किया है । मैं जो बात कहने की कोशिश कर रहा था वह यह है । छोटे या बड़े दलों में बहुत से ऐसे लोग हैं जो अपने आप को कभी भी सत्याग्राही नहीं कहते । उन्होंने कुछ तोड़फोड़ की है । थोड़े से व्यक्तिगत सत्याग्रहियों के ये काम, हालांकि यह उससे बिल्कुल भिन्न है, उस अन्य काम में मिलना चाहते हैं । या हालांकि हम कह नहीं सकते— कि यह ठीक है या नहीं, पुर्तगाली लोग इसे मिलाते हैं । अभी मैं व्यावाहरिक पहलू के बारे में कह रहा था । परन्तु आज मैं इस सभा में इस व्यावहिरक पहलू पर ज़ोर

देने की कोशिश न करके इस मामले के बुनियादी सवालों पर ज़ोर देने की कोशिश कर रहा हूं। मुझ से पूछा जाता है, "इस तरह के सत्याग्रह का विकल्प क्या है ?" इसके उत्तर में मैं भी प्रश्न करने वाले से पूछ सकता हूं "आप जिन तरीक़ों का सुझाव देते हैं, उनसे आप वास्तव में क्या प्राप्त करना चाहते हैं ?" स्पष्ट है कि इस तरह मामलों से एक दम स्वयं कोई हल नहीं निकलता। सभा को विदित है कि हमने अनेकों आर्थिक, वित्तीय और अन्य कार्यवाहियां की हैं। मुझे इसमें कोई शक़ नहीं है उनका काफ़ी असर पड़ता है। आगे हम जो कार्यवाही करेंगे उसके साथ उनका असर और भी बढ़ जाता है। इस मामले को हल करने के यह साधारण उपाय हैं। याद रखिये कि हम ऐसा सोचने में फौजी या पुलिस कार्यवाही का परित्याग कर रहे हैं। हमने उसका ख्याल छोड़ दिया है। फिर हम सोच रहे हैं कि हम और क्या कार्यवाही करें। मेरे दिमाग़ में ज़रा भी सन्देह नहीं है कि हमने जो भी कार्यवाही की है तथा परिस्थितियों में जो भी परिवर्तन हो रहे हैं अन्ततः उससे गोआ को पुर्तगालियों से आज़ादी अवश्य मिलेगी। मैं इसकी कोई तारीख़ मुक़र्रर नहीं कर सकता। मैं नहीं समझता कि संसार में कोई भी व्यक्ति संसार की किसी भी समस्या के लिये कोई तारीख़ मुक़र्रर कर सकता है। चाहे ये मामले योरोप के हैं या जर्मनी के या योरोप के अन्य भागों के, सुदूरपूर्व के हैं या हिन्द चीन के, या अफरीका के हैं या किसी अन्य भाग के, मगर उनके बारे में कोई तारीख़ मुक़र्रर नहीं की जा सकती। परन्तु, मुख्य बात यह है कि जिन नीतियों पर चला जाता है वे ठीक हों। मेरा अवश्य ही यह विश्वास है कि अच्छे आचरण का अच्छा फल होना आवश्यक है ठीक उसी प्रकार जैसा कि बुरे आचरण का बुरा फल होता है। इस बारे में मुझे तनिक सन्देह नहीं है। मेरा ख्याल है कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में काम करते हुये हम किसी और तरीक़े को नहीं अपना सकते हैं।

गोआ में बीसवीं शताब्दी में सोलहवीं शताब्दी द्वारा बीसवीं शताब्दी, जागृत एशिया से खत्म होने वाले उपनिवेशवाद के सामना करने का और पुर्तगाली अधिकारियों द्वारा स्वतन्त्र भारत के किये जाने वाले अपमान की, और पुर्तगाल के इस ढंग से काम करने का चित्र हमारे सामने आता है जो किसी भी विचारशील व्यक्ति के लिये आधुनिक संसार में इतना अनर्गल और आश्चर्यजनक है कि वह चौंक पड़ता है। यह किसी साधारण तर्क या कार्यवाही का साधारण विरोध नहीं है।

गोआ में जो हो रहा है उसकी विदेशों में क्या प्रतिक्रिया हुई है, यह हमने रुचिपूर्ण देखा है। हो सकता है कि अन्य सदस्यों ने भी देखा हो। गोआ न केवल खत्म होने वाले ऐसे उपनिवेशवाद का प्रतीक है बन गया है जो अब भी बने रहने का प्रयत्न कर रहा है, बल्कि इससे अधिक कुछ हो गया है। यह एक कसौटी बन गया है जिस पर हम अन्य देशों की नीतियों की परख कर सकते हैं। क्या कोई देश गोआ में पुर्तगाली हठधर्मी का सक्रिय समर्थन करता है या उसे सक्रिय प्रोत्साहन देता है ? यदि हां, तो इससे हम जान लेंगे कि संसार के मामलों में उस देश का क्या दृष्टिकोण है। या, कोई ऐसे देश हैं जो इस स्थिति में निष्क्रिय समर्थन करते हैं ? हम जानते हैं कि उनकी दृष्टि क्या है ? या, क्या वे देश यह महसूस करते हैं कि गोआ में पुर्तगाली शासन नहीं रह सकता और न रहना चाहिये, क्योंकि यह सभ्य मानव जाति के लिये चुनौती बन गया है। विशेषकर, वहां पुर्तगाली अधिकारियों के पाशविक और असभ्य व्यवहार के पश्चात्। अतः मैं इस सभा से निवेदन करता हूं कि गोआ

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

के बारे में जो भी नीति बनाई है वह ठीक नीति है। समय समय पर छोटे छोटे परिवर्तन हो सकते हैं। परन्तु उस नीति की बुनियादी बातों में तब तक कोई परिवर्तन नहीं होना चाहिये जब तक कि हम अपने देश और विदेश में किये गये काम को, तथा अपनी राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय नीतियों को मिटाकर कोई ऐसा रास्ता अपनायें जिसकी हमें कोई इच्छा नहीं है। और मैं कहता हूं कि यह नीति जो संसार की इस बड़ी नीति और हमारी राष्ट्रीय दृष्टि के अनुकूल है ऐसी नीति है जो सफल होगी। यह केवल सैद्धांतिक नीति है, बल्कि व्यावहारिक नीति है। मुझे यक़ीन है कि इस मामले के बारे में केवल सदस्यों के ही दिमागों से नहीं बल्कि अन्य लोगों के भी दिमागों से सारे सन्देह दूर हो जायेंगे। फिर, वे यह भी महसूस करेंगे कि पिछले वर्ष में हम इसी नीति पर चले हैं। यह ठीक है कि हाल में इस नीति के बारे में कुछ भ्रम हो गया था और हमने स्थिति में थोड़ी लापरवाही बरती। इसके लिये आप लोग हम पर उंगली उठा सकते हैं। लेकिन जैसे ही हमने देखा कि इसका नतीजा क्या हो रहा है, कि यह हमें ग़लत रास्ते पर ले जा रही है, हमने अपने आप को संभाल लिया। और कोई भी सरकार, जो यह महसूस करती है, साहस होते हुये इस बुराई को रोकने से पीछे नहीं हट सकती। मेरा ख्याल है कि हमने, देश ने और सरकार ने, इस मामले में अपने आपको और संसार को साहस दिखाया है। इसके यह मायने नहीं हैं कि गोआ के सम्बन्ध में हमारी सरकार ने तनिक भी लापरवाही की है। मैं चाहता हूं कि भारत के बाहर लोग इस बात को पूरी तरह समझ लें। हाल के महीनों में जो भी हुआ है उससे यह एक महत्वपूर्ण सवाल बन गया है। हो सकता है कि यह एक अत्यधिक महत्वपूर्ण प्रश्न न हो। क्योंकि यह अनिवार्य है कि गोआ भारत में मिल कर रहेगा, कि पुर्तगाल यह जानता है कि उसे भारत छोड़ना होगा और यह कि तब गोआ को अनिवार्य रूप से भारत संघ के साथ मिलना होगा। परन्तु पहिली बात यह है कि गोआ को आजाद कराया जाये। यदि साधारण क्रम में इस में कुछ समय लगता है, तो कोई विशेष बात नहीं है। अनेकों ऐसे मामले हैं जिनमें वक्त लगता है। सभा जानती है कि चीन और इंडोनेशिया के कुछ थोड़े से क्षेत्र पुर्तगाल के अधीन हैं, और वह स्थिति अब भी चल रही है। चीन की जनवादी सरकार इस से अत्यधिक भड़क नहीं उठती कि मकाओ पुर्तगाल के अधीन है। मकाओ उन्हें मिलेगा इसमें कोई शक नहीं है, और प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है। लेकिन वे भड़कते नहीं हैं। उनकी फौजी ताक़त कमज़ोर नहीं है। अगर वे इसे लेना चाहें तो यह उनके लिये छोटी सी बात है। लेकिन वे इसे अपनी बड़ी नीतियों की वजह से लेना नहीं चाहते। पुर्तगाल की और भी बस्तियां हैं। इसलिये यह बात कि किसी मामले में कुछ अधिक समय लगता है या नहीं, साधारणतया कोई विशेष बात नहीं है। मगर पिछली घटनाओं ने गोआ के मामले को अधिक महत्वपूर्ण विषय बना दिया है। इनसे हम में और देश में कुछ जोश आ गया है। इस लिये हमें इस मामले पर अपनी सारी बुद्धि और ताकत से काम लेना है और इस से एक प्रश्न को ऐसे ही नहीं रहने देना है। मैं आशा करता हूं कि अन्य देशों के लोग यह महसूस करेंगे।

अध्यक्ष महोदय : प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ :

"कि वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और उसके बारे में भारत सरकार की नीति पर विचार किया जाये।"